ISSN- 2350-0530(O), ISSN- 2394-3629(P) DOI: 10.29121/granthaalayah.v5.i7.2017.6350

INTERNATIONAL JOURNAL OF RESEARCH – GRANTHAALAYAH
A knowledge Repository

Social

भारत की विदेश नीति में अटल बिहारी वाजपेयी का योगदान: एक यथार्थवादी बहुलतावादी दृष्टिकोण

डॉ. सी. अनुपा तिर्की *1

*1 सहायक प्राध्यापक, राजनीति विज्ञान, शास माता शबरी नवीन कन्या महाविद्यालय बिलासपुर (छ.ग.)

सार संक्षेपः– यह अध्ययन अटल बिहारी वाजपेयी के प्रधानमंत्री कार्यकाल के दौरान भारत की विदेश नीति का विश्लेषण यथार्थवादी बहुलतावाद के दृष्टिकोण से करता है। इसमें यह तर्क प्रस्तुत किया गया है कि 1998 के परमाणु परीक्षण के बाद से भारत ने अपनी विदेश नीति में एक सूक्ष्म और यथार्थवादी दृष्टिकोण अपनाया, जिसका मुख्य उद्देश्य देश के मौलिक हितों की प्राप्ति था। इस नीति की विशेषता यह रही कि इसने नव-उदारवादी वैश्वीकरण, आतंकवाद, निरस्त्रीकरण, बदलते अंतरराष्ट्रीय व्यवस्था, बहुपक्षीय संस्थाओं के कमजोर पड़ने तथा नए क्षेत्रीयतावाद के उभरने जैसी समसामयिक चुनौतियों का सक्रिय रूप से सामना किया। भारत ने इन चुनौतियों से निपटने के लिए बहुलतावादी व्यवहारिक दृष्टिकोण अपनाया, जो आर्थिक प्रगति के साथ-साथ सुरक्षा हितों की रक्षा पर केंद्रित था। इसके अतिरिक्त, इस नीति का उद्देश्य भारत की स्थिति को एक उभरती वैश्विक शक्ति के रूप में ऊँचा उठाना था, साथ ही अपने मूल सिद्धांतों की निरंतर वकालत करना। यह अध्ययन यह भी स्पष्ट करता है कि किस प्रकार दक्षिणपंथी विचारधारा वाली एक राजनीतिक पार्टी ने सत्ता में आते समय कांग्रेस पार्टी की जनता की आकांक्षाओं को पूरा करने में विफलता के बीच नेतृत्व संभाला। इस आलेख में इस रूपरेखा में दिए गए मुख्य तर्कों और वाजपेयी द्वारा उनके क्रियान्वयन की जांच की गई है। अंत में, वाजपेयी द्वारा अपनाई गई रणनीतियों और उनके भविष्य में भारत की विदेश नीति पर संभावित प्रभाव का मूल्यांकन किया गया है।

मुख्य शब्द – यथार्थवाद, कूटनीति, विदेश नीति, बहुलतावाद, सुरक्षा हित

Cite This Article: डॉ. सी. अनुपा तिर्की. (2017). भारत की विदेश नीति में अटल बिहारी वाजपेयी का योगदान: एक यथार्थवादी बहुलतावादी दृष्टिकोण. *International Journal of Research - Granthaalayah*, 5(7), 646-653. https://dx.doi.org/10.29121/granthaalayah.v5.i7.2017.6350

प्रस्तावनाः– अटल बिहारी वाजपेयी ने भारत के प्रधानमंत्री के रूप में तीन कार्यकालों में सेवा दी। उन्होंने मई 1996 में 13 दिनों का संक्षिप्त कार्यकाल, मार्च 1998 से अप्रैल 1999 तक 13 महीनों का दूसरा कार्यकाल, और 1998 से 2004 तक राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन (एनडीए) के प्रमुख के रूप में पाँच वर्षों का पूर्ण कार्यकाल पूरा किया। वे इस उच्च पद पर आसीन होने वाले पहले गैर-कांग्रेसी नेता थे और दुनिया के सबसे बड़े लोकतंत्र के नेतृत्व में उन्होंने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उनकी राजनीतिक सूझबूझ और कूटनीतिक निपुणता ने उनके कार्यकाल के दौरान भारत की विदेश नीति को नई ऊँचाइयों तक पहुँचाया।

नए पाठकों के लिए, उनके निर्णय - जैसे मई 1998 में परमाणु बम परीक्षण करना, पड़ोसी देशों के साथ मैत्रीपूर्ण संबंध विकसित करना, 20 फरवरी 1999 को पाकिस्तान के साथ ऐतिहासिक लाहौर घोषणा-पत्र पर हस्ताक्षर करना, चीन-भारत संबंधों को आगे बढ़ाना, और भारत-अमेरिका संबंधों को मजबूत करना - उल्लेखनीय हैं। हालांकि, भारत की विदेश नीति को अधिक व्यवस्थित और व्यवहारिक रूप से संचालित करने के लिए उनके यथार्थवादी-बहुलतावादी विचार प्रत्येक कदम के पीछे स्पष्ट तर्क रखते थे।

ISSN- 2350-0530(O), ISSN- 2394-3629(P) DOI: 10.29121/granthaalayah.v5.i7.2017.6350

वाजपेयी की तुलना कई यूरोपीय रणनीतिकारों से की गई है, जैसे 19वीं सदी के मेटरनिक और कैस्टलरेघ। अभिज्ञान राय द्वारा 'मिंट' वेबसाइट पर प्रकाशित निबंध, मनोज जोशी का 'द वायर' में आलेख, और 'इकॉनॉमिक टाइम्स' में दीपांजन राय चैधरी की रिपोर्ट - सभी ने वाजपेयी की विदेश नीति को भारत की बढ़ती अंतरराष्ट्रीय प्रतिष्ठा का आधार माना है। अरुणिमा गुप्ता ने 'मॉडर्न डिप्लोमेसी में अपने लेख में तर्क दिया कि वाजपेयी की विदेश नीति ने भारत को अंतरराष्ट्रीय मंच पर एक जिम्मेदार और प्रभावशाली खिलाड़ी बनने की नींव दी।

वाजपेयी सरकार ने यथार्थवादी बहुलतावाद के तीन परस्पर संबंधित तत्वों को क्रियान्वित किया -

1) राष्ट्रीय सुरक्षा को सुदृढ़ करने हेतु मजबूत राष्ट्रीय शक्ति बनाए रखना,
2) आर्थिक विकास और अन्य रणनीतिक लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए सशक्त "सॉफ्ट पावर" का प्रयोग, और
3) क्षेत्रीय, उप-क्षेत्रीय तथा अतिरिक्त-क्षेत्रीय स्तर पर औपचारिक गठबंधन बनाए बिना बहु-संरेखण अपनाना।

इन अभ्यासों का अंतिम उद्देश्य चार बिंदुओं में निहित था -

- राष्ट्रीय सुरक्षा और हिंदू राष्ट्रीय शक्ति को मजबूत करना,
- अमेरिका के साथ संबंध सुधारना,
- भारत के पड़ोसी देशों के साथ मैत्रीपूर्ण संबंध बनाना और क्षेत्रीय, उप-क्षेत्रीय तथा अतिरिक्त-शक्ति केंद्रों के साथ सहयोग कर भारत के सामाजिक, आर्थिक और रणनीतिक विकास एजेंडे को आगे बढ़ाना,

और वैश्विक मंच पर भारतीय परंपराओं व मूल्यों को बढ़ावा देकर भारत को एक अग्रणी शक्ति के रूप में प्रस्तुत करना।

भारत की विदेश नीति हमेशा यथार्थवादी आधार पर रही है। 1971 में इंदिरा गांधी ने भी इसी यथार्थवादी नीति का उपयोग किया था, जब बांग्लादेश पहली बार विश्व मानचित्र पर आया। लेकिन रणनीतिक दृष्टि से, अटल बिहारी वाजपेयी द्वारा यथार्थवादी बहुलतावाद का कार्यान्वयन एक नई शुरुआत का प्रतीक था।

भारत की 'विदेश नीति' के मूल सिद्धांत

भारत की स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद उसके प्रथम प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू ने प्रारंभिक वर्षों में विदेश नीति के निर्माण में निर्णायक भूमिका निभाई। उन्होंने गुटनिरपेक्षता के सिद्धांत का दृढ़ समर्थन किया। स्वतंत्रता प्राप्ति के समय भारत भौतिक रूप से कमजोर था और राष्ट्र-निर्माण की प्रक्रिया में अनेक विकासात्मक चुनौतियों का सामना कर रहा था। शीत युद्ध काल में नेहरू ने दो महाशक्तियों के बीच तटस्थता बनाए रखते हुए उपनिवेशवाद के अंत, साम्राज्यवाद के विरोध, निरस्त्रीकरण और विश्व-एकता जैसे आदर्शवादी लक्ष्यों का समर्थन किया।

गुटनिरपेक्षता एक रणनीतिक दृष्टिकोण के रूप में भारत को स्वायत्त राजनीतिक और आर्थिक नीतियाँ अपनाने तथा विश्व शांति और अंतरराष्ट्रीय सहयोग को बढ़ावा देने की सुविधा प्रदान करती थी। इस नीति का उद्देश्य यह था कि भारत अपनी विदेश नीति में किसी महाशक्ति के ब्लॉक का हिस्सा न बने, बल्कि अंतरराष्ट्रीय संबंधों में आदर्शवाद का प्रतीक बने।

1964 में नेहरू के निधन और 1962 के भारत-चीन युद्ध के बाद प्रधानमंत्री बनीं इंदिरा गांधी (1966-1977 एवं 1980-1984) ने अलग रणनीतियाँ अपनाईं। उनके अनुसार, गुटनिरपेक्षता केवल शक्ति-संतुलन का साधन बन गई थी, जो भारत की राष्ट्रीय सुरक्षा की आवश्यकताओं को पूरा नहीं कर पा रही थी और न ही वैश्विक शांति को प्रोत्साहित कर रही थी।

विदेश नीति विशेषज्ञ स्टीफन कोहेन ने इंदिरा गांधी को "मिलिटेंट नेहरूवियन" कहा, क्योंकि उन्होंने गुटनिरपेक्षता के सिद्धांत को बनाए रखते हुए व्यावहारिक दृष्टिकोण अपनाया। इंदिरा गांधी राष्ट्रीय हितों को सर्वोपरि मानती थीं, भारत की महानता में विश्वास रखती थीं और देश की स्वतंत्रता पर किसी भी खतरे का सैन्य बल से मुकाबला करने के लिए तत्पर थीं।

इसके बाद मोरारजी देसाई के नेतृत्व वाली जनता पार्टी की सरकार सत्ता में आई, जिसमें विदेश मंत्री के रूप में अटल बिहारी वाजपेयी का विशेष प्रभाव रहा और गुटनिरपेक्ष नीति को प्राथमिकता दी गई। तत्पश्चात इंदिरा गांधी और उनके पुत्र राजीव गांधी ने अमेरिका के साथ संबंध सुधारने के प्रयास किए, लेकिन उनकी नीतियों में कोई मूलभूत परिवर्तन नहीं हुआ।

1980 के दशक के उत्तरार्ध में भारत को भुगतान संतुलन (Balance of Payments) संकट का सामना करना पड़ा, जिसने विदेश नीति को भी प्रभावित किया। सोवियत संघ के विघटन ने भारत को आर्थिक और सामरिक सहयोग से वंचित कर दिया, जिससे अर्थव्यवस्था पर गंभीर असर पड़ा। इस चुनौतीपूर्ण समय में प्रधानमंत्री पी. वी. नरसिम्हा राव ने "लुक ईस्ट " (Look East) नीति अपनाई, जिसके माध्यम से पूर्वी एशियाई देशों से व्यापार और निवेश आकर्षित करने का प्रयास किया गया। साथ ही, उन्होंने 1991 में उदारीकरण, निजीकरण और वैश्वीकरण (LPG) की आर्थिक सुधार नीति लागू की, जिसने भारत के आर्थिक विकास की गति तेज की।

इस दौर में दो बड़े परिवर्तन हुए

ISSN- 2350-0530(O), ISSN- 2394-3629(P) DOI: 10.29121/granthaalayah.v5.i7.2017.6350

1) सोवियत संघ का विघटन और शीत युद्ध का अंत।
2) जैसा कि राजनीतिशास्त्री राजनी कोठारी ने कहा, कांग्रेस पार्टी का एकछत्र प्रभुत्व कम होना और गठबंधन राजनीति का युग प्रारंभ होना, जिसमें केंद्र में कई दल मिलकर शासन करने लगे।

अटल बिहारी वाजपेयी की विदेश नीति

अटल बिहारी वाजपेयी स्वभाव से जन्मजात नेता और कुशल रणनीतिकार थे, जिन्होंने राज्य-शास्त्र में व्यवहारिकता की संस्कृति को बढ़ावा दिया। अंतरराष्ट्रीय संबंधों के प्रमुख विद्वान हांस मॉर्गेंथाऊ ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक "Politics among Nations: The Struggle for Power and Peace" में कहा था कि यथार्थवादी शक्ति को स्व-हित के संदर्भ में समझते हैं। कौटिल्य के अर्थशास्त्र की तरह, एक शासक का मुख्य उद्देश्य अपने राज्य की शक्ति बढ़ाना, साम्राज्य का विस्तार करना और शत्रुओं का नाश करना होता है। इस प्रकार, शक्ति को पश्चिमी और भारतीय दोनों परंपराओं में एक प्रभावी साधन के रूप में देखा जाता है। राष्ट्रीय शक्ति का अर्थ है दूसरों के व्यवहार को अपनी इच्छानुसार बदलने की क्षमता, और किसी भी देश की विदेश नीति के परिणाम, चाहे सकारात्मक हों या नकारात्मक, उसकी शक्ति और उसके प्रभावी प्रयोग पर निर्भर करते हैं।

विश्लेषकों ने वाजपेयी के कार्यकाल में भारत की विदेश नीति में आदर्शवाद से व्यवहारवाद की ओर परिवर्तन को "क्रॉसिंग द रुबिकॉन" कहा है। हालांकि भारतीय नीति-निर्माताओं का कहना था कि यह केवल शक्ति-राजनीति नहीं, बल्कि इसमें मानक मूल्य भी निहित हैं। वाजपेयी का यथार्थवाद व्यापक था और इसे यथार्थवादी बहुलतावाद कहा जा सकता है, जिसमें तीन प्रमुख तत्व सम्मिलित थे - पहला, हार्ड पावर अर्थात सैन्य बल या आर्थिक दबाव का प्रयोगय दूसरा, सॉफ्ट पावर अर्थात आकर्षण और प्रेरणा के माध्यम से प्रभाव डालनाय और तीसरा, बहु-संरेखण अर्थात औपचारिक गठबंधन बनाए बिना विभिन्न देशों के साथ संबंध रखना।

वाजपेयी के इस दृष्टिकोण में राष्ट्रीय सुरक्षा को सुदृढ़ करने के लिए मजबूत राष्ट्रीय शक्ति बनाए रखना, आर्थिक विकास और अन्य रणनीतिक लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए सशक्त "सॉफ्ट पावर" का प्रयोग करना, तथा क्षेत्रीय, उप-क्षेत्रीय और अतिरिक्त-क्षेत्रीय स्तर पर औपचारिक गठबंधन से बचते हुए बहु-संरेखण अपनाना शामिल था। इन प्रयासों का अंतिम उद्देश्य चार बिंदुओं में निहित था - राष्ट्रीय सुरक्षा और हिंदू राष्ट्रीय शक्ति को मजबूत करना, अमेरिका के साथ संबंध सुधारना, भारत के पड़ोसी देशों के साथ मैत्रीपूर्ण संबंध बनाना तथा वैश्विक मंच पर भारतीय परंपराओं व मूल्यों को बढ़ावा देकर भारत को एक अग्रणी शक्ति के रूप में प्रस्तुत करना।

भारत की विदेश नीति हमेशा यथार्थवादी आधार पर रही है। 1971 में इंदिरा गांधी ने भी इसी यथार्थवादी नीति का प्रयोग किया था जब बांग्लादेश पहली बार विश्व मानचित्र पर आया। किंतु रणनीतिक दृष्टि से, अटल बिहारी वाजपेयी द्वारा यथार्थवादी बहुलतावाद का कार्यान्वयन एक नई शुरुआत का प्रतीक था। उन्होंने आर्थिक विकास को सुरक्षा से जोड़ते हुए विवेक, संतुलन और सावधानी का परिचय दिया, जिससे उनकी विकास योजना को आवश्यक प्रोत्साहन मिला। इस दृष्टिकोण ने न केवल भारत की रक्षा और आर्थिक हितों को साधा, बल्कि देश की वैश्विक स्थिति को भी मजबूत किया।

मजबूत राष्ट्रीय शक्ति को बढ़ावा देना और बनाए रखना

1995 में परमाणु अप्रसार संधि (NPT) को स्थायी और बिना शर्त लागू कर दिया गया था। भारत, जो पूर्ण परमाणु निरस्त्रीकरण का प्रबल समर्थक रहा है, ने इस संधि पर हस्ताक्षर करने से इंकार कर दिया क्योंकि यह केवल संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद (P-5) के स्थायी सदस्यों को परमाणु हथियार रखने और उनका उपयोग करने का विशेषाधिकार देती थी, जबकि ये देश पूर्ण निरस्त्रीकरण को प्राथमिकता नहीं देते थे। इसके जवाब में, 1996 में P-5 देशों ने व्यापक परमाणु परीक्षण प्रतिबंध संधि (CTBT) का मसौदा पेश किया, जिसमें एक विवादास्पद प्रावधान जोड़ा गया - यदि भारत ने 1999 तक इस पर हस्ताक्षर नहीं किए, तो संयुक्त राष्ट्र उसके खिलाफ इराक जैसे व्यापारिक प्रतिबंध लागू कर सकता है।

मई 1996 में वाजपेयी-नेतृत्व वाली सरकार बनने के कुछ ही सप्ताह के भीतर यथार्थवादी नीतियों का प्रभाव स्पष्ट हो गया। जून 1996 में जेनेवा में व्यापक परमाणु परीक्षण प्रतिबंध संधि पर आयोजित सम्मेलन में भारत की प्रतिनिधि अरुंधति घोष ने स्पष्ट कहा कि भारत की सुरक्षा चिंताओं के कारण वह इस संधि का विरोध करता है। भारत का मानना था कि NPT और CTBT दोनों ही पक्षपाती संधियाँ हैं।

अप्रैल 6, 1998 को पाकिस्तान द्वारा गौरी मिसाइल के परीक्षण ने भारत को एक कठिन स्थिति में डाल दिया - या तो परमाणु हथियार बनाए जाएँ या इस संभावना को पूरी तरह छोड़ दिया जाए। अंततः मई 1998 में वाजपेयी ने ऐतिहासिक निर्णय लेते

ISSN- 2350-0530(O), ISSN- 2394-3629(P) DOI: 10.29121/granthaalayah.v5.i7.2017.6350

हुए परमाणु परीक्षण करने का आदेश दिया। यह निर्णय केवल सैन्य क्षमता का प्रदर्शन नहीं था, बल्कि भारत की सुरक्षा, रणनीतिक स्वायत्तता और अंतरराष्ट्रीय स्थिति को मजबूत करने का एक सुनियोजित कदम था।

मई 1998 का परमाणु परीक्षण (हिंदू राष्ट्रीय शक्ति)

मई 11 और 13, 1998 को भाजपा-नेतृत्व वाली गठबंधन सरकार ने दो ऐतिहासिक कदम उठाए। पहला, पोखरण में पाँच परमाणु उपकरणों का परीक्षण किया गया, जिनमें एक थर्मोन्यूक्लियर हथियार भी शामिल था। दूसरा, भारत ने 1974 से अपनाई हुई शांतिपूर्ण परमाणु कार्यक्रम की नीति को औपचारिक रूप से त्याग दिया। इन परीक्षणों को भारतीय जनता पार्टी और राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ ने हिंदू गौरव और शक्ति का प्रतीक बताया। आरएसएस के वरिष्ठ नेता एम. एस. गोलवलकर पहले ही कह चुके थे कि भारत के लिए परमाणु हथियारों का विकास और उत्पादन अत्यंत आवश्यक है, और यही विचार वाजपेयी की विदेश नीति की नींव में भी विद्यमान था।

इन परीक्षणों के पीछे दो प्रमुख प्रश्न थे - पहला, वाजपेयी ने 1998 में यह कदम क्यों उठाया? और दूसरा, भारत ने इतने वर्षों तक इस निर्णय में देरी क्यों की? विश्लेषक जेम्स चिरियानकंडाथ के अनुसार, वाजपेयी का मुख्य उद्देश्य था कि शीत युद्ध के बाद की वैश्विक व्यवस्था में भारत को एक प्रमुख शक्ति के रूप में स्थापित किया जाए। वाजपेयी ने स्पष्ट कहा कि जब तक कोई समग्र और गैर-भेदभावपूर्ण निरस्त्रीकरण कार्यक्रम नहीं बनता, तब तक भारत ऐसे किसी ढाँचे का समर्थन नहीं कर सकता जो परमाणु हथियार रखने वाले और न रखने वाले देशों में कृत्रिम विभाजन करे।

शीत युद्ध के बाद कई ऐसी परिस्थितियाँ बनीं जिन्होंने राष्ट्र-राज्यों की संप्रभुता को चुनौती दी। इनमें सीटीबीटी और एनपीटी जैसी भेदभावपूर्ण निरस्त्रीकरण व्यवस्थाएँ और नव-उदारवादी वैश्वीकरण शामिल थे, जो बाजार शक्तियों को प्राथमिकता देते हैं। इसके अलावा, चीन द्वारा पाकिस्तान को गुप्त रूप से परमाणु तकनीक उपलब्ध कराना और पाकिस्तान का आतंकवाद का गढ़ बन जाना भारत की सुरक्षा चिंताओं को और बढ़ा रहा था। वाजपेयी ने अमेरिकी राष्ट्रपति बिल क्लिंटन को यह स्पष्ट रूप से बताया कि चीन से बढ़ते सामरिक खतरे उनके परमाणु परीक्षण के फैसले का मुख्य कारण हैं।

भारत ने 1956 में ब्रिटेन की मदद से एक शोध रिएक्टर प्राप्त किया था और 1974 में एक "शांतिपूर्ण परमाणु विस्फोट" किया था, लेकिन वित्तीय, रणनीतिक और नैतिक कारणों से हथियार-स्तर की प्रगति नहीं की गई। वाजपेयी का मानना था कि राष्ट्रीय सुरक्षा केवल एक मजबूत रक्षा तंत्र से ही संभव है, जिसमें आधुनिक सैन्य तकनीक और परमाणु हथियार शामिल हैं। उनके अनुसार, "सुरक्षा के बिना विकास संभव नहीं, और विकास के बिना सुरक्षा अधूरी है।" यही सोच उनके 1998 के परमाणु परीक्षण के निर्णय की आधारशिला बनी।

राष्ट्रीय सुरक्षा के संगठनात्मक ढाँचे का निर्माण

परमाणु हथियार संपन्न राष्ट्र बनने के बाद भारत को बढ़ते सुरक्षा खतरों से निपटने के लिए एक नए संस्थागत ढाँचे की आवश्यकता थी। इसी संदर्भ में वाजपेयी सरकार ने राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार बोर्ड (National Security Advisory Board – NSAB) का गठन किया, ताकि परमाणु हथियारों के उपयोग से संबंधित निर्णयों पर विशेषज्ञ सलाह प्राप्त की जा सके। अगस्त 1999 में एनएसएबी ने भारत का पहला परमाणु सिद्धांत (Nuclear Doctrine) जारी किया, और जनवरी 2003 में परमाणु कमान प्राधिकरण (Nuclear Command Authority) की स्थापना की गई। विश्लेषक ऐशली टेलिस ने वाजपेयी सरकार की परमाणु नीति को "Force in Being" के रूप में परिभाषित किया, जिसका अर्थ है कि परमाणु हथियारों के उपयोग योग्य हिस्सों को अलग-अलग रखा जाए, लेकिन आपात स्थिति में उन्हें शीघ्र संयोजित करने के लिए तत्परता बनी रहे।

वाजपेयी की संयमित रणनीति का एक उत्कृष्ट उदाहरण 1999 का कारगिल युद्ध था। भारत ने आरंभ से ही स्पष्ट कर दिया कि वह तब तक संघर्षविराम या वार्ता नहीं करेगा, जब तक कि पाकिस्तानी सैनिक पूरी तरह कारगिल की चोटियों से वापस न लौट जाएँ। हालांकि, वाजपेयी ने भारतीय वायुसेना को स्पष्ट निर्देश दिए कि वे नियंत्रण रेखा (LoC) को पार न करें, जिससे संघर्ष का दायरा सीमित रहे। इसके बावजूद, उन्होंने पाकिस्तान के साथ संबंध सुधारने के अपने प्रयास जारी रखे और एक ऐतिहासिक यात्रा कर लाहौर पहुँचे।

यद्यपि कारगिल युद्ध, 1999 के कंधार अपहरण कांड, 2001 में भारतीय संसद पर आतंकवादी हमला और आगरा शिखर वार्ता की विफलता जैसी घटनाएँ हुईं, फिर भी वाजपेयी ने पाकिस्तान के साथ शांति और सहयोगपूर्ण संबंध बनाने की दिशा में पहल जारी रखी। उन्होंने बैक-चैनल कूटनीति (Back-channel diplomacy) और "ट्रैक-टू" (Track-II) संवाद का

ISSN- 2350-0530(O), ISSN- 2394-3629(P) DOI: 10.29121/granthaalayah.v5.i7.2017.6350

सहारा लेकर भारत-पाकिस्तान शांति प्रक्रिया को गति दी। इन प्रयासों के परिणामस्वरूप 3 नवंबर 2003 को पाकिस्तान ने नियंत्रण रेखा पर युद्धविराम का प्रस्ताव रखा, जिसे भारत ने स्वीकार कर लिया।

इसी तरह, 1998 में चीन के साथ परमाणु समानता प्राप्त करने के बाद वाजपेयी सरकार ने 2003 में बीजिंग के साथ महत्वपूर्ण राजनयिक प्रगति की। इस यात्रा का उद्देश्य दोहरा था - पहला, भारत ने औपचारिक रूप से तिब्बत को चीन का अभिन्न अंग मानाय दूसरा, सीमा विवाद के समाधान के लिए विशेष प्रतिनिधि (Special Representative) तंत्र की स्थापना की गई।

सॉफ्ट पावर का उपयोग

"सॉफ्ट पावर" शब्द का प्रयोग 1990 में अमेरिकी शोधकर्ता जोसेफ एस. नाए जूनियर ने किया था। उन्होंने शक्ति को इस रूप में परिभाषित किया कि एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्रों को अपनी इच्छानुसार कार्य करने के लिए प्रेरित या विवश कर सके। नाए के अनुसार, शक्ति दूसरों के व्यवहार को तीन तरीकों से प्रभावित कर सकती है- बल प्रयोग (Coercion), आर्थिक प्रोत्साहन (Payment) और आकर्षण (Attraction), जिसमें आकर्षण को ही सॉफ्ट पावर या सहमति-आधारित शक्ति कहा जाता है। हार्ड पावर जहाँ सैन्य या आर्थिक दबाव पर आधारित होती है, वहीं सॉफ्ट पावर प्रेरणा और सांस्कृतिक प्रभाव से काम करती है। नाए का यह भी मानना था कि आधुनिक समय में केवल सैन्य शक्ति का प्रभाव घट रहा है और इसके स्थान पर प्रौद्योगिकी, शिक्षा और आर्थिक विकास जैसे तत्व अंतरराष्ट्रीय राजनीति में अधिक प्रभावी हो गए हैं।

भारतीय संदर्भ में शशि थरूर ने सॉफ्ट पावर पर अपने विश्लेषण में कहा कि केवल हार्ड पावर पर निर्भर रहने से नकारात्मक भावनाएँ और शत्रुता उत्पन्न हो सकती हैं, जबकि केवल सॉफ्ट पावर पर निर्भरता कमजोरी का संकेत मानी जा सकती है। वाजपेयी ने अपने कार्यकाल में कई मौकों पर सॉफ्ट पावर रणनीतियों का प्रभावी उपयोग किया।

मई 1998 के परमाणु परीक्षण के बाद अमेरिका ने भारत पर आर्थिक प्रतिबंध लगाए। इसके अलावा, जापान, जर्मनी, ऑस्ट्रेलिया, कनाडा, स्वीडन और डेनमार्क सहित चैदह देशों ने भारत और पाकिस्तान के खिलाफ द्विपक्षीय सहायता कार्यक्रम निलंबित कर दिए। इस स्थिति में भारत लगभग अंतरराष्ट्रीय अलगाव का सामना कर रहा था, लेकिन उसने इन दबावों के आगे झुकने से इंकार कर दिया। प्रतिबंधों के चलते विदेशी पूँजी का प्रवाह घटा, लेकिन भारत ने प्रवासी भारतीयों के लिए रेसर्जेंट इंडिया बॉन्ड (Resurgent India Bonds) जारी करके इस कमी की भरपाई की, जिससे 4 अरब डॉलर से अधिक की राशि जुटाई गई। अक्टूबर 1998 तक भारत के विदेशी मुद्रा भंडार अप्रैल 1998 के स्तर से भी ऊपर पहुँच गए।

वाजपेयी ने प्रवासी भारतीयों की भूमिका को मान्यता देते हुए 2003 से हर वर्ष प्रवासी भारतीय दिवस मनाने की घोषणा की, जो 9 जनवरी को आयोजित किया जाता है। विद्वान सी. राजा मोहन के अनुसार, भारतीय प्रवासी समुदाय भारत की विदेश नीति में एक महत्वपूर्ण सॉफ्ट पावर स्रोत बन चुका है। इसके अलावा, भारत का लोकतांत्रिक ढाँचा, स्वतंत्र मीडिया, स्वायत्त न्यायपालिका और जीवंत नागरिक समाज भी उसकी सॉफ्ट पावर को मजबूत करते हैं।

1990 के दशक में दक्षिण-पूर्व एशिया में लगभग 67 लाख भारतीय मूल के लोग बसे थे, जिनके भेजे गए धन ने भारत के आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया। अमेरिका के साथ संबंधों में भी भारतीय प्रवासी एक सांस्कृतिक और राजनीतिक सेतु का कार्य करते रहे। भारत ने लोकतंत्र को सॉफ्ट पावर के रूप में उपयोग करते हुए अधिनायकवाद और आतंकवाद के विरुद्ध अपनी वैश्विक छवि को मजबूत किया। 2000 में स्थापित कम्युनिटी ऑफ डेमोक्रेसीज का भारत संस्थापक सदस्य है, और 2001 में वाजपेयी ने कहा था कि बहुलतावादी लोकतांत्रिक देशों की सफलता, कट्टरता और घृणा की विचारधारा को समाप्त करने में, नए अंतरराष्ट्रीय व्यवस्था को परिभाषित करेगी।

बहु-संरेखण और गठबंधन से परहेज

विद्वान राघवन का मानना है कि शीत युद्ध के बाद के दौर में चीन, रूस, जापान और भारत जैसे देशों ने बहु-संरेखण (Multi-alignment) की नीति अपनाई। हालांकि, इनमें से कोई भी देश इतना शक्तिशाली नहीं था कि अकेले बहुकेन्द्रित वैश्विक व्यवस्था स्थापित कर सके, जिसमें अमेरिका एकमात्र महाशक्ति न रहे। भारत ने विकसित और विकासशील, दोनों प्रकार के देशों के साथ सभी स्तरों पर संबंध स्थापित किए। यह जटिल नेटवर्क सहयोग, समन्वय और प्रतिस्पर्धाकृतीनों को शामिल करता था, ताकि समान उद्देश्यों वाले देशों का एक समूह तैयार किया जा सके।

भारत की बहु-संरेखण नीति पारंपरिक सैन्य गठबंधनों से भिन्न थी। जैसे नाटो (NATO), सेंटो (CENTO) और सीटो (SEATO) का मुख्य उद्देश्य सदस्य देशों को बाहरी आक्रमण से बचाना था, वहीं बहु-संरेखण का उद्देश्य केवल सैन्य सुरक्षा नहीं, बल्कि व्यापक राजनीतिक, रणनीतिक और आर्थिक हितों को साधना था। वर्तमान विदेश मंत्री डॉ. एस. जयशंकर के

ISSN- 2350-0530(O), ISSN- 2394-3629(P) DOI: 10.29121/granthaalayah.v5.i7.2017.6350

अनुसार, यह रणनीति अधिक जीवंत और परस्पर संवादात्मक है तथा इसमें विभिन्न अंतरराष्ट्रीय भागीदारों को शामिल करने पर बल दिया जाता है।

शीत युद्ध की समाप्ति के बाद भारत का ध्यान आर्थिक विकास और सुरक्षा सुनिश्चित करने पर केंद्रित हो गया। परमाणु शक्ति बनने के बाद इस दृष्टिकोण को और अधिक मजबूती मिली। वॉल्टर एंडरसन के अनुसार, भारत के आर्थिक विकास पर जोर देने से पाकिस्तान के लिए खतरा अपेक्षाकृत कम हो गया, विशेषकर तब जब अफगानिस्तान से सोवियत सेना की वापसी के बाद अमेरिका ने पाकिस्तान को हथियारों की आपूर्ति बंद कर दी। इसके साथ ही, सोवियत संघ का विघटन और चीन-रूस संबंधों में सुधार ने भी पाकिस्तान के सामरिक महत्व को घटा दिया।

भारत ने अपनी विदेश नीति में गैर-पारंपरिक सुरक्षा मुद्दों को प्राथमिकता दी, जैसे प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (FDI) आकर्षित करना, उन्नत प्रौद्योगिकियों तक पहुँच प्राप्त करना और वैश्विक बाजार में अपनी हिस्सेदारी बढ़ाना। इस बदलाव के तहत भारत ने वैश्विक, क्षेत्रीय और उप-क्षेत्रीय मंचों में सक्रिय भागीदारी की, जिसमें अमेरिका, इजराइल, फ्रांस, जर्मनी और चीन जैसे देशों के साथ-साथ यूरोपीय संघ (EU), आईबीएसए (IBSA), आसियान (ASEAN) और अन्य बहुपक्षीय संगठनों से सहयोग शामिल था।

वाजपेयी की विभिन्न देशों की नियमित यात्राएँ इस नीति के ठोस प्रमाण हैं, जिन्होंने भारत की वैश्विक स्थिति को सुदृढ़ किया और उसके आर्थिक व सुरक्षा हितों को व्यापक आधार प्रदान किया।

मूल्यांकन

अटल बिहारी वाजपेयी के 1998 में परमाणु परीक्षण के निर्णय ने शीत युद्ध के बाद एशिया के भू-राजनीतिक परिदृश्य को पुनर्परिभाषित कर दिया। यह निर्णय ऐसे समय लिया गया जब भारत ने सोवियत संघ जैसे एक महत्त्वपूर्ण सहयोगी को खो दिया था, जो परमाणु सुरक्षा कवच प्रदान कर सकता था, और इसके परिणामस्वरूप सामरिक अनिश्चितताएँ उत्पन्न हो गई थीं। पड़ोस में चीन का पाकिस्तान के साथ सैन्य सहयोग भारत के लिए नई सुरक्षा चुनौतियाँ पैदा कर रहा था। साथ ही, भारत के अमेरिका के साथ जटिल और अस्थिर संबंध, वैश्वीकरण का प्रभाव, तथा चीन की बढ़ती आर्थिक और सैन्य शक्ति ने भारत को अपनी विदेश नीति का पुनर्मूल्यांकन करने के लिए विवश किया, ताकि राष्ट्रीय सुरक्षा को सर्वोच्च स्तर पर सुनिश्चित किया जा सके।

परमाणु परीक्षण के कई सकारात्मक परिणाम सामने आए। सबसे पहले, इसने भारत को वैश्विक समुदाय के समक्ष एक ऐसे देश के रूप में स्थापित किया, जो उभरती अंतरराष्ट्रीय व्यवस्था को प्रभावित करने की क्षमता रखता है। दूसरा, इसने वर्षों से चली आ रही परमाणु निष्क्रियता की स्थिति को समाप्त किया। तीसरा, इसने परमाणु अप्रसार नीति में शक्ति-संतुलन के असमान ढाँचे को चुनौती दी। चैथा, इसने चीन और भारत के बीच शक्ति-संतुलन को पुनर्स्थापित किया, जिससे चीन की यह धारणा टूट गई कि वह एशिया का एकमात्र वैध परमाणु शक्ति संपन्न देश है। साथ ही, इसने पाकिस्तान और चीन जैसे देशों के विरुद्ध भारत की हार्ड पावर और प्रतिरोध क्षमता को प्रदर्शित किया तथा आतंकवाद को प्रायोजित करने वालों को संदेश दिया। पाँचवाँ, इसने एशिया-प्रशांत क्षेत्र की शक्ति-गतिशीलता को बदला और दक्षिण एशियाई देशों को परमाणु विश्वास और सुरक्षा-निर्माण उपाय (CSBMs) अपनाने की दिशा में प्रेरित किया। छठा, इसने परमाणु ऊर्जा के प्रयोग के लिए स्पष्ट कमांड-एंड-कंट्रोल संरचना स्थापित कर किसी भी प्रकार की अनिश्चितता को समाप्त किया।

अंततः, परमाणु परीक्षण ने भारत को अमेरिका के साथ मजबूत सामरिक संबंध बनाने का अवसर भी प्रदान किया। अमेरिका के लिए यह आकर्षक था कि भारत गुटनिरपेक्ष रुख से हटकर अधिक आत्मविश्वासी और दृढ़ नीति अपनाने लगा है। इसके परिणामस्वरूप भारत-अमेरिका के बीच रणनीतिक साझेदारी विकसित हुई, जिसमें उन्नत प्रौद्योगिकी का आदान-प्रदान, रक्षा समझौते और आर्थिक सहयोग शामिल थे। इसके अतिरिक्त, भारत ने अमेरिका के सहयोगी देश इजराइल के साथ भी घनिष्ठ सामरिक संबंध स्थापित किए, जिससे अमेरिकी नीति-निर्माण पर इजराइली लॉबी के माध्यम से प्रभाव डाला जा सके।

भारत ने सॉफ्ट पावर का भी प्रभावी उपयोग किया। उसने 1998 के परमाणु परीक्षण के बाद पश्चिमी देशों द्वारा लगाए गए प्रतिबंधों का सफलतापूर्वक सामना किया और प्रवासी भारतीयों की मदद से वित्तीय संकट पर काबू पाया। लोकतांत्रिक मूल्यों को बढ़ावा देते हुए भारत ने अमेरिका के साथ रणनीतिक सहयोग को मजबूत किया और 2000 में स्थापित कम्युनिटी ऑफ डेमोक्रेसीज का एक प्रमुख सदस्य बना। इन प्रयासों ने संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद की स्थायी सदस्यता के लिए भारत के दावे को और अधिक मजबूत किया।

बहु-संरेखण की नीति ने क्षेत्रीय, उप-क्षेत्रीय और अतिरिक्त-क्षेत्रीय शक्तियों के साथ भारत के संबंधों को मजबूत किया। वाजपेयी के मजबूत राजनयिक संबंधों ने न केवल अमेरिका, बल्कि यूरोपीय संघ, ब्रिटेन, फ्रांस और जर्मनी जैसे देशों के साथ

ISSN- 2350-0530(O), ISSN- 2394-3629(P) DOI: 10.29121/granthaalayah.v5.i7.2017.6350

भी भारत की साझेदारी को गहरा किया। "विस्तारित पड़ोस" की रणनीति, जिसे विदेश मंत्रालय की 2000-2001 की वार्षिक रिपोर्ट में पहली बार प्रस्तुत किया गया, ने भारत को न केवल भू-आर्थिक सहयोग और ऊर्जा क्षेत्र में साझेदारी प्रदान की, बल्कि सुरक्षा सहयोग को भी विस्तारित किया।

वाजपेयी का मानना था कि किसी देश की शक्ति केवल सैन्य बल पर नहीं, बल्कि सॉफ्ट पावर के प्रभावी उपयोग पर भी निर्भर करती है। बहु-संरेखण ने भारत को दक्षिण एशिया से बाहर भी अपनी पहुँच और प्रभाव बढ़ाने का अवसर दिया। यह दृष्टिकोण आज भी प्रासंगिक है और भारत की वैश्विक स्थिति को मजबूत करने में सहायक है, जैसा कि जी-20 की अध्यक्षता, जलवायु परिवर्तन, संयुक्त राष्ट्र सुधार, महामारी-नियंत्रण और कोविड-19 वैक्सीन आपूर्ति जैसे मुद्दों में भारत की सक्रिय भूमिका से स्पष्ट होता है।

निष्कर्ष

किसी भी रणनीतिक दृष्टिकोण की तरह, वाजपेयी का यथार्थवाद भी परिस्थितियों और अवसरों के अनुसार सोची-समझी प्राथमिकताओं और स्पष्ट रूप से व्यक्त राष्ट्रीय हितों पर आधारित था। इस परिप्रेक्ष्य में वाजपेयी ने सावधानी और आत्मसंयम के साथ यथार्थवाद को प्राथमिकता दी। उन्होंने केवल गुटनिरपेक्षता पर टिके रहने के बजाय हार्ड पावर और सॉफ्ट पावर, दोनों का संयोजन अपनाया। वाजपेयी ने बहु-संरेखण की नीति का सुझाव दिया, जिससे देश अपनी सुरक्षा हितों की रक्षा कर सके और आर्थिक विकास के लिए अनुकूल वातावरण तैयार हो सके। उनका मुख्य उद्देश्य प्रत्यक्ष विदेशी निवेश को आकर्षित करना और घरेलू अवसंरचना को मजबूत करना था, ताकि निवेशक भारत में अपने संसाधनों का उपयोग करने के लिए प्रोत्साहित हों।

भारत की सशक्त आर्थिक वृद्धि को बढ़ावा देने के साथ-साथ वे सुरक्षा हितों की रक्षा और राष्ट्रीय मूल्यों को बनाए रखने के लिए प्रतिबद्ध थे। इसके लिए उन्होंने राजनीतिक कुशलता और कूटनीतिक दूरदर्शिता का परिचय दिया, जहाँ सुरक्षा और अर्थव्यवस्था को समान महत्व दिया गया तथा भारत के पारंपरिक मूल्यों के महत्व को भी रेखांकित किया गया। वाजपेयी की विदेश नीति शीत युद्ध के बाद की चुनौतियों से निपटने के दो मोर्चों पर केंद्रित थी-पहला, रक्षा मामलों में रूस पर निर्भरता का कम होना और आतंकवाद की बढ़ती चिंताय दूसरा, वैश्वीकरण का प्रभाव, जिसने भारत की खुली, नव-उदारवादी अर्थव्यवस्था को वैश्विक बाजार से गहराई से जोड़ा।

1998 में परमाणु परीक्षण का निर्णय, ऐसे समय में जब भारत को वैश्विक आलोचना का सामना करना पड़ा, उसकी प्रतिष्ठा को एक प्रमुख वैश्विक खिलाड़ी के रूप में मजबूत करने में सहायक सिद्ध हुआ। आगे बढ़ते हुए, वाजपेयी की विदेश नीति की आलोचनात्मक समीक्षा करना आवश्यक है, ताकि यह देखा जा सके कि भविष्य में यह भारत के राष्ट्रीय हितों की सर्वोत्तम सेवा कैसे कर सकती है। भारत को अपनी बदलती घरेलू और बाहरी सुरक्षा चुनौतियों का समाधान करने के लिए अपनी विदेश नीति को इस प्रकार तैयार करना होगा कि वह रणनीतिक सैन्य संबंधों में अमेरिका और अन्य देशों के साथ वास्तविक सहयोग स्थापित करे।

चीन के बढ़ते प्रभाव को संतुलित करने के लिए हिंद महासागर क्षेत्र में समान विचारधारा वाले देशों के साथ सहयोग की संभावनाएँ बढ़ रही हैं। एक रणनीतिक कदम के रूप में भारत को अपने सॉफ्ट पावर संसाधनों- कुशल मानव संसाधन, प्रवासी भारतीय समुदाय, पारंपरिक ज्ञान, कला, शिल्प और संस्कृति का उपयोग करना चाहिए। पारदर्शी और निष्पक्ष चुनावों के माध्यम से प्रदर्शित लोकतांत्रिक क्षमता भी भारत के लिए एक प्रमुख आकर्षण है। बहु-संरेखण नीति अपनाकर भारत अपनी आर्थिक प्रगति को तेज कर सकता है और ऊर्जा सुरक्षा के लिए वैकल्पिक रास्ते खोज सकता है।

भारत को चाहिए कि वह अपने नजदीकी और विस्तारित पड़ोस में समान हितों के आधार पर सहयोग को मजबूत करे। दक्षिण एशिया के देश- जैसे मालदीव, भूटान, श्रीलंका और पाकिस्तान-गठबंधन बनाने में हिचकिचा रहे हैं, इसलिए उनका विश्वास जीतने के लिए नैतिक और भौतिक दोनों तरह के संसाधनों में निवेश आवश्यक है। विदेशी पूँजी और बहुराष्ट्रीय निवेश को आकर्षित करने के लिए भारत को पारदर्शिता और जवाबदेही स्थापित करनी होगी, नौकरशाही बाधाओं को दूर करना होगा, अनुकूल व्यवसायिक वातावरण बनाना होगा और धार्मिक अल्पसंख्यकों को नाराज करने से बचना होगा। साथ ही, भारत को एक ऐसे वैश्विक शासन तंत्र की वकालत करनी चाहिए जो स्थापित नियमों और सिद्धांतों पर आधारित हो।

इन सभी तत्वों के सम्मिलित प्रभाव से भारत भविष्य की चुनौतियों का सामना कर सकेगा और अपने दीर्घकालिक लक्ष्यों को फिर से परिभाषित कर सकेगा। यह भारत को एक ऐसे वैश्विक शक्ति केंद्र के रूप में स्थापित करेगा जो बहु-केंद्रित प्रभाव से युक्त हो और अंतरराष्ट्रीय मानदंडों को आकार देने तथा वैश्विक संबंधों का मार्गदर्शन करने में अग्रणी भूमिका निभाए।

ISSN- 2350-0530(O), ISSN- 2394-3629(P) DOI: 10.29121/granthaalayah.v5.i7.2017.6350

संदर्भ सूची

1. ठाकुरता, पी. जी. (2002)। *Ideological Contradictions in an Era of Coalitions: Economic Policy Confusion in the Vajpayee Government*. ग्लोबल बिज़नेस रिव्यू, 3(2), 201-223.
2. चंदर, एन. जे. (2004)। *Coalition politics: the Indian experience*. कॉन्सेप्ट पब्लिशिंग कंपनी।
3. शर्मा, एस. आर., गजरानी, एस., एवं बख्शी, एस. आर. (संपा०)। (1998)। *Sonia Gandhi: The President of AICC* (खंड 4)। ए.पी.एच. पब्लिशिंग।
4. सिंह, एम. जी. जे. (2000)। *With Honour & Glory: Wars fought by India 1947-1999*. लांसर पब्लिशर्स।
5. वर्मा, एन. एम. पी., एवं साहू, आर. पी. (2024)। *India's Foreign Policy during Prime Minister Atal Bihari Vajpayee*. ब्रिटिश जर्नल ऑफ मल्टीडिसिप्लिनरी एंड एडवांस्ड स्टडीज, 5(1), 170-186.
6. वाजपेयी, अ. बि. (1978)। *India's foreign policy today*. इंटरनेशनल स्टडीज़, 17(3-4), 379-388.
7. ठाकुर, आर. (1998)। *A Changing of the Guard in India*. एशियन सर्वे, 38(6), 603-623.
8. उल्लेख, एन. पी. (2018)। *The untold Vajpayee: Politician and paradox*. रैंडम हाउस इंडिया।
9. चौधरी, ए. (2023)। *Vajpayee: The Ascent of the Hindu Right, 1924–1977*. पैन मैकमिलन।
10. सिंह, के. (2007)। *Prime Minister's Office: A Critical Analysis*. द इंडियन जर्नल ऑफ पॉलिटिकल साइंस, 629-640.
11. जय, जे. आर. (1996)। *Commissions and Omissions by Indian Prime Ministers* (खंड 1)। दया बुक्स।
12. कपूर, डी. (2000)। *India in 1999*. एशियन सर्वे, 40(1), 195-207.
13. पाटिल, एस. एच. (2001)। *India's Experiment with Coalition Government at the Federal Level*. द इंडियन जर्नल ऑफ पॉलिटिकल साइंस, 586-593.
14. बजपेयी, अ. (2015)। *Speaking 'the nation secular': (e) merging faces of India. Multiple secularities beyond the west: religion and modernity in the global age*. बर्लिन: डे ग्रूटर, 39-62.
15. रानी, वी. (2017)। *India's foreign policy and economic liberalization. ट्रांस एशियन जर्नल ऑफ मार्केटिंग एंड मैनेजमेंट रिसर्च (TAJMMR)*, 6(7), 10-17.
16. खान, एम. जी. (2003)। *Coalition Government and Federal System in India*. द इंडियन जर्नल ऑफ पॉलिटिकल साइंस, 167-190.
17. मैलोन, डी. एम., एवं मुखर्जी, आर. (2009)। *India-US relations: The shock of the new*. इंटरनेशनल जर्नल, 64(4), 1057-1074.

*Corresponding author.
E-mail address: